ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 209-210**
I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-20, No.- II, Issues-40, YEAR- April-June 2026

भारतीय ज्ञान परम्परा में विभिन्न नास्तिक दर्शन

डॉ0 सुजय श्रीवास्तव
अयोध्या – फैजाबाद (उ0प्र0) भारत

Received-29.05.2026, Revised-08.06.2026, Accepted-16.06.2026, **E-mail:sujays01000@gmail.com**

सारांशः *भारतीय दार्शनिक चिंतन की विशाल परम्परा में आस्तिक एवं नास्तिक दर्शनों का वर्गीकरण एक मौलिक अवधारणा है। यह वर्गीकरण भारतीय ज्ञान परम्परा की वैचाारिक बहुलता एवं सहिष्णुता को भी रेखाकिंत करता है। दर्शन के संदर्भ में आस्तिक और नास्तिक शब्दों का प्रयोग सामान्यतः लोग व्यवहार में प्रचलित अर्थ से सवर्था भिन्न है। यहां आस्तिक वह है, जो वेदों को प्रमाण के रूप में स्वीकार करता है, और नास्तिक वह है, जो वेदों की प्रमाणिकता का निषेध करता है। प्रख्यात दार्शनिक, शिक्षाविद् डॉ0 राधाकृष्णन ने इस विभाजन की स्पष्ट व्याख्या करते हुए लिखा है कि– ''आस्तिक दर्शन वह है, जो वेदों के प्रमाण्य के स्वीकार करते है और नास्तिक दर्शन वह है, जो वेद प्रमाण्य को नहीं मानते है।''[1]*

कुंजीभूत शब्द– भारतीय ज्ञान परम्परा, भारतीय दार्शनिक चिंतन, नास्तिक दर्शन, आस्तिक दर्शन, बहुलता एवं सहिष्णुता, कर्म–कांड।

नास्तिक दर्शन की इस व्यापक श्रंखला के अन्तर्गत मुख्यतः तीन प्रमुख दार्शनिक प्रणाली–चार्वाक दर्शन, बौद्ध दर्शन और जैन दर्शन का अध्ययन किया जाता है। इन तीनों ने अपने–अपने ढंग से तत्कालीन वैदिक कर्म–कांड व्यवस्था, यज्ञ, जातिगत विषमता और ब्राह्मणों के सामाजिक–धार्मिक वर्चस्व को चुनौती दी। चार्वाक दर्शन ने जहां प्रत्यक्ष प्रमाण के अतिरिक्त अन्य सभी प्रमाणों की चुनौती को अस्वीकार कर एक चरम भौतिकवादी एवं सुखवादी जीवन–दृष्टि का प्रतिपादन किया वहीं बौद्ध दर्शन ने प्रतीत्य समुत्पाद, अनात्मवाद और क्षणिक वाद जैसे गम्भीर दार्शनिक अवधारणा के माध्यम से वैदिक दर्शन को चुनौती प्रस्तुत किया। जैन दर्शन ने अनेकांतवाद, स्यादवाद और सप्तभंगी जैसी मौलिक अवधारणाओं का विकास कर एक नया आयाम प्रस्तुत किया। इन तीनों प्रमुख नास्तिक दर्शनों के अलावा आजीवक, नियतिवाद, अक्रियवाद आदि जैसे कुछ अन्य नास्तिक दर्शनों का भी उल्लेख हमें प्राप्त होता है। यद्यपि इनका मौलिक साहित्य लगभग नष्ट हो गया है फिर भी भारतीय ज्ञान परम्परा में इन्हें ''अवैदिक'' या ''वैदिकेत्तर'' दर्शन के रूप में जाना जाता है। एम0 हिरियण्णा के शब्दों ''यद्यपि नास्तिक दर्शन वेदों को प्रमाण नहीं मानते तथापि वे भारतीय दर्शन के अभिन्न अंग है और उनके बिना भारतीय चिंतन का इतिहास अधूरा रहेगा।[2]

नास्तिक दर्शनों के उदय की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि अत्यंत जटिल है। वैदिक युग के उत्तरार्द्ध में विशेषतः ब्राह्मण ग्रन्थों के काल में यज्ञ संस्था का आत्यधिक विस्तार हुआ। यज्ञों की जटिलता बढ़ी और पुरोहित वर्ग का सामाजिक–आर्थिक प्रमुख स्थापित हुआ। ऐसे समय जहां वैदिक कर्मकाण्डों की निरर्थकता पर प्रश्नचिन्ह लगाने लगे, वहीं दूसरी ओर वर्ण–व्यवस्था की कठोरता के विरूद्ध भी स्वर मुखरित होने लगे। यज्ञीय कर्मकाण्डों के स्थान पर ज्ञान और ध्यान के महत्व पर बल दिये जाने लगा, जो एक ही वैचारिक परिवर्तन का सूचक था। डॉ0 चन्द्रधर शर्मा ने इस संदर्भ में लिखा है कि ''उपनिषदों का दार्शनिक चिंतन कर्मकाण्ड के विरूद्ध एक बौद्धिक विद्रोह था, किन्तु वह वेदों के ढांचे के भीतर ही रहा। नास्तिक दर्शनों ने इस विद्रोह को उस ढांचे से बाहर ले जाकर एक स्वतंत्र वैचारिक क्रान्ति का रूप दिया।''[3]

छटी शताब्दी ई0पूर्व0 का काल भारतीय इतिहास में एक विशिष्ट वैचारिक उर्वरता का युग था। इस काल में एक साथ अनेक विचारकों ने तत्कालीन सामाजिक धार्मिक व्यवस्था को चुनौती दी। गौतम बुद्ध, पूरण कस्यप, पकुध कच्चायन और संजय वेलठ्पित्त–ये सभी श्रमण पराम्परा के विचारक थे, जो वैदिक परम्परा से पृथक एक स्वतंत्र विचाराधारा का प्रतिनिधित्व कर रहे थे। यहां पर एक बात स्पष्ट करना आवश्यक है कि नास्तिक दर्शन केवल वेदों के विरोध तक ही सीमित नहीं थे, बल्कि प्रत्येक ने एक सुसंगत और सुविकसित दार्शनिक प्रणाली का निर्माण किया है, जिनमें ज्ञान–मीमांसा, तत्व मीमांसा और आचार–दर्शन तीनों का सुनियोजित विन्यास देखने को मिलता है।

विभिन्न नास्तिक दार्शनिक छटी शताब्दी ई0पूर्व के लगभग भारत के प्रमुख नास्तिक दार्शनिक इस प्रकार से है :

1. **पूरण कस्यप–** पूरण कस्यप छटी शताब्दी ई0 पूर्व के एक प्रभावशाली प्रभावशाली श्रमण विचारक थे, जिन्होंने अक्रियवाद नामक एक विशिष्ट दार्शनिक सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। इस सिद्धान्त के अनुसार आत्मा न तो किसी कर्म की कर्ता है और न ही किसी कर्म के फल की भोक्ता। मनुष्य द्वारा किये गये पाप या पुण्य कर्मों का कोई नैतिक परिणाम नहीं होता है। पूरण कस्यप का यह अक्रियवाद एक प्रकार का नैतिक शून्यवाद था जो कर्म और कर्मफल की पारंपरिक अवधारणा को पूर्णतः नकारता था। उनके दर्शन का मूल आधार आत्मा की निष्क्रियता की अवधारण थी। उनके अनुसार आत्मा स्वाभवतः अकर्ता है, अतः वह किसी भी कर्म के लिये उत्तरदायी नहीं हो सकती है। जिसे हम कर्म कहते है–वह केवल तत्वों का संयोग–वियोग मात्र है, जिसका किसी आध्यात्मिक तत्व से कोई सम्बन्ध नहीं है। यद्यपि पूरण कस्यप का यह मत सामाजिक रूप से कभी स्वीकार्य नहीं हो सका और उनका सम्प्रदाय शीघ्र ही विलुप्त हो गया। डॉ0 सुरेन्द्र नाथ दास गुप्ता के शब्दों में–''पूरण कस्यप का अक्रियवाद भारतीय चितंन में नैतिक शून्यवाद का प्रथम और सबसे स्पष्ट प्रतिपादन था।''[4]

2. **मक्खलि – गोशाल–** मक्खलि गोशाल श्रमण परामपरा के सबसे प्रभावशाली और रहस्यमय विचारकों में से एक थे। वह आजीवक सम्प्रदाय के प्रवर्तक थे जो मौर्यकाल तक भारत का एक प्रमुख दार्शनिक सम्प्रदाय बना रहा। मक्खलि गोशाल ने नियतिवाद के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जिसके अनुसार समस्त घटनायें सुख–दुःख, बंधन–मोक्ष, सब–कुछ पूर्व निर्धारित और परिवर्तनीय है। मनुष्य के प्रत्यनों, पुरूषार्थ या इच्छा–शक्ति का कोई मूल्य नहीं है। मक्खलि गोशाल का नियतिवाद एक अत्यंत सुनियोजित और तार्किक दार्शनिक प्रणाली थी। उन्होंने समस्त जीवनों को छः वर्गों में विभाजित किया और बताया कि प्रत्येक जीवन को एक निश्चित समय तक इन योनियों में भम्रण करना पड़ता है, जिसके पश्चात् स्वतः ही उसके दुःखों का अंत हो जाता है।

3. **अजित केशकबंली–** अजित केशकबंली को भारतीय भौतिकवादी और नास्तिक दर्शन का अग्रदूत माना जाता है। उन्होंने उच्छेदवाद का प्रतिपादन किया, जिसके अनुसार मृत्यु के साथ ही मनुष्य का पूर्ण और अंतिम अन्त हो जाता है, न कोई आत्मा है, न पुर्नजन्म, न स्वर्ग–नर्क न कर्मफल। मनुष्य चार महाभूतों–पृथ्वी, जल, तेज और वायु के संयोग से बना है, और मृत्यु के बाद यह तत्व अपने–अपने मूल स्रोतों में विलीन हो जाते है। अजित केशकबंली ने केवल आत्मा और पुर्नजन्म का ही निषेध नहीं किया बल्कि उन्होंने

यक्षों, दान–पुण्य और धार्मिक अनुष्ठानों की निरर्थकता पर भी गम्भीर प्रश्नचिन्ह लगाया। उन्होंने यज्ञों को मूर्खो का प्रलाप कहा और पुरोहित वर्ग पर शोषण के आरोप लगाया। अजित केशकबंली का यह भौतिकवादी और नास्तिक दर्शन ही आगे चलकर चार्वाक या लोकायत दर्शन के रूप में विकसित हुआ।

4. पकुध कच्चायन– पकुध कच्चायन ने सप्त तत्ववाद नामक एक मौलिक दार्शनिक सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। उनके अनुसार जगत में सात शाश्वत, अक्रिय और अविकारी तत्व विद्यमान है, जो एक दूसरे को प्रभावित नहीं करते है। इनके सप्त तत्व वाद की तुलना वैशेषिक दर्शन के परमाणुवाद से की जा सकती है। दोनों में ही जगत के मूल तत्वों को नित्य और अविकारी माना गया है। कुछ विद्वान पकुध कच्चायन के सप्त तत्ववाद में सारद्ध–दर्शन के प्रकृति–पुरुष द्वैतवाद का प्रारम्भिक रुप देखते हैं।

5. संजय वेलठ्टिपुत्त– संजय वेलठ्टिपुत्त ने अज्ञानवाद या विक्षेपवाद का प्रतिपादन किया। वह किसी भी दार्शनिक प्रश्न का निश्चित उत्तर देने से बचते थे। परलोक है या नहीं ? आत्मा है या नहीं ? पाप–पुण्य का फल मिलता है या नहीं ? ऐसे किसी प्रश्न पर वह हां या नहीं में उत्तर नहीं देतें है। अपितु चतुष्कोटि विनिर्मुक्त (चार विकल्पों से मुक्त) उत्तर देते थे। उनका मानना था कि परम सत्य मानवीय बुद्धि और भाषा की पकड़ से परे है, अतः उसके विषय में कुछ भी निश्चित रूप से कहना असम्भव है।

6. निगंठ नाथपुत्त– निगंठ नाथपुत्त अर्थात महावीर स्वामी श्रमण पराम्परा के सबसे प्रभावशाली विचारकों में से एक थे और वह जैन धर्म के 24वें तथा अंतिम तीर्थकर माने जाते है। महावीर स्वामी का दर्शन वैदिक यज्ञो, पशु बलि और वर्ण व्यवस्था का तीव्र विरोध करता था। मोक्ष की प्राप्ति के लिये उन्होंने कठोर तपस्या, संयम और अहिंसा के पालन को अनिवार्य बताया। उनके द्वारा प्रतिपादित अनेकातवाद और स्यादवाद के सिद्धान्त जैन दर्शन की सबसे मौलिक देने है। इनका दर्शन कर्म और पुरूषार्थ दोनों की सार्थकता को स्वीकार करता था, और इसी कारण वह अधिक लोकप्रिय और चिरस्थायी सिद्ध हुआ।

छटी शताब्दी ई0पूर्व के श्रमण विचारकों के दार्शनिक मतो के बारे में अध्ययन केवल ऐतिहासिक जिज्ञासा की पूर्ति हीं नहीं बल्कि भारतीय ज्ञान पराम्परा में नास्तिक दर्शन के उदय और विकास की प्रक्रिया के समझने के लिए भी अनिवार्य है। यह सभी विचारक वैदिक कर्मकाण्ड, यज्ञीय हिंसा, वर्ण व्यवस्था और ब्राह्मणों के सामाजिक, धार्मिक वर्चस्व के विरोध में एकमत थे। यद्यपि इनके अपने दार्शनिक सिद्धान्तों में इतनी विधिधता और परस्पर विरोध था कि उन्हें एक समरूप वैचारिक धारा के अन्तर्गत नहीं रखा जा सकता है। डॉ0 एस0एन0 दास गुप्ता के शब्दों में 'श्रमण आन्दोलन कोई एकीकृत दार्शनिक प्रणाली नहीं थी, अपितु विभिन्न और परस्पर विरोधी विचारधाराओं का एक वृहत वैचारिक मंच था जिसमें निरन्तर शास्त्रार्थ और संवाद चलता रहता था।[5]

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. राधाकृष्णन एस0 भारतीय दर्शन खण्ड–1, राजपाल एंड सन्स दिल्ली, 2016 पृष्ठ सं0–55.
2. हिरियण्णा एम0, भारतीय दर्शन का सार, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 2021, पृष्ठ सं0–122.
3. शर्मा चन्द्रघर, भारतीय दर्शन आलोचना और अनुशीलन, दिल्ली 2020, पृष्ठ–87.
4. दास गुप्ता, सुरेन्द्रनाथ, भारतीय दर्शन का इतिहास, खण्ड–3, मोतीलाल बनारसी दास, 2020 पृष्ठ–125.
5. दास गुप्ता, एस0एन0, भारतीय दर्शन का इतिहास, खण्ड–3, मोतीलाल बनारसी दास, 2020 पृष्ठ–132.

अन्य ग्रन्थ

6. चट्टोपाध्याय, देवी प्रसाद, लोकायत, ग्रन्थ शिल्पी, दिल्ली 2020, पृष्ठ–38.
7. पाण्डे जी0सी0, श्रमण पराम्परा, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली 2019 पृष्ठ–132.
8. मुखर्जी राधाकुमुद, चन्द्रगुप्त मौर्य एण्ड हिज टाइम, मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली 2015, पृष्ठ–187.

*****

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-20, No.- II, Issues-40, YEAR- April-June 2026